अध्याय 4: वन्य-समाज और उपनिवेशवाद

हमारे चारों ओर लगभग सभी वस्तुओं को जंगल से प्राप्त वस्तुओं से बनाया जाता है। **ऐमेज़ॉन या पश्चिमी घाट के जंगलों के एक ही टुकड़े में पौधों की 500 अलग-अलग प्रजातियाँ मिल जाती हैं।**

1700 से 1995 के बीच (औद्योगीकरण के दौर में) 139 लाख वर्ग किलोमीटर जंगल यानी दुनिया के कुल क्षेत्रफल का 9.3 प्रतिशत भाग औद्योगिक इस्तेमाल, खेती-बाड़ी, चरागाहों व ईंधन की लकड़ी के लिए साफ़ कर दिया गया।

वनों का विनाश क्यों?

वनों के लुप्त होने को सामान्यत: वन विनाश कहते हैं। वन विनाश की प्रक्रिया कई सदियों से चली आ रही थी लेकिन औपनिवेशिक शासन के दौरान यह कहीं अधिक व्यवस्थित और व्यापक रूप को ग्रहण कर लेती है।

ज़मीन की बेहतरी

सन 1600 में हिंदुस्तान के कुल भू-भाग के लगभग छठे हिस्से पर खेती होती थी। आबादी बढ़ने से खाद्य पदार्थों की माँग के कारण किसानों ने जंगलों को साफ़ कर खेती का विस्तार किया। आज यह है आँकड़ा बढ़कर आधे तक पहुँच गया है।

औपनिवेशिक काल में खेती में तेजी आने के कई कारण थे:-

- अंग्रेजों ने 19वीं सदी के यूरोप की बढ़ती आबादी के लिए खाद्यान्न और औद्योगिक उत्पादन के लिए कच्चे माल के लिए **व्यावसायिक फ़सलों जैसे पटसन, गन्ना, गेहूँ व कपास के उत्पादन को जम कर प्रोत्साहित किया।**
- 19वीं सदी की शुरुआत में औपनिवेशिक सरकार **जंगलों को खेती योग्य बनाकर उससे राजस्व और कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी चाहती थी।** इसी वजह से 1880 से 1920 के बीच खेती योग्य ज़मीन के क्षेत्रफल में 67 लाख हेक्टेयर की बढ़त हुई।

पटरी पर स्लीपर

19वीं सदी की शुरुआत तक इंग्लैंड में बलूत (ओक) के जंगल लुप्त होने लगे थे। अब **शाही नौसेना के लिए लकड़ी की आपूर्ति 1820 के दशक में हिंदुस्तान की वन संपदा का अन्वेषण करने के बाद हिंदुस्तान से होने लगी।**

➡ शाही सेना के आवागमन और औपनिवेशिक व्यापार के लिए रेल लाइनें अनिवार्य थीं। इंजनों को चलाने के लिए ईंधन के तौर पर और रेल की पटरियों को जोड़े रखने के लिए स्लीपरों के रूप में लकड़ी की भारी ज़रूरत थी।

➡ **भारत में रेल लाइनों का जाल 1860 के दशक से तेज़ी से फैला। इसके साथ-साथ बड़ी तादाद में पेड़ भी काटे गए।** अकेले मद्रास प्रेसीडेंसी में 1850 के दशक में प्रतिवर्ष 35,000 पेड़ स्लीपरों के लिए काटे गए। इस कारण रेल लाइनों के इर्द-गिर्द जंगल तेज़ी से गायब होने लगे।

बागान

यूरोप में चाय, कॉफ़ी और रबड़ की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए औपनिवेशिक सरकार ने जंगलों को अपने कब्ज़े में लेकर सस्ती दरों पर यूरोपीय बागान मालिकों को सौंप दिया। इन इलाकों चाय-कॉफ़ी की खेती की जाने लगी।

व्यावसायिक वानिकी की शुरुआत

स्थानीय लोगों द्वारा जंगलों का उपयोग व व्यापारियों द्वारा पेड़ों की कटाई से जंगल नष्ट होने की चिंता में अंग्रेज़ों ने मशवरे के लिए **डायट्रिच ब्रैंडिस (जर्मन विशेषज्ञ) को बुलाया और उसे पहला वन महानिदेशक नियुक्त किया।**

उसने लोगों को संरक्षण विज्ञान में प्रशिक्षित करने और जंगलों के प्रबंधन के लिए एक व्यवस्थित तंत्र विकसित करने की बात कही।

वन संपदा के उपयोग संबंधी नियम कानून बनाए गए:-

- पेड़ों की कटाई और पशुओं को चराने पर पाबंदी।
- पेड़ काटने वाले किसी भी व्यक्ति को सजा।

ब्रैंडिस ने 1864 में भारतीय वन सेवा की स्थापना की और 1865 के भारतीय वन अधिनियम को सूत्रबद्ध करने में सहयोग दिया।

➡ **1906 में इंपीरियल फ़ॉरेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट की स्थापना देहरादून में हुई। यहाँ वैज्ञानिक वानिकी पद्धति की शिक्षा दी जाती थी।** लेकिन आज पारिस्थितिक विशेषज्ञों सहित ज़्यादातर लोग इस पद्धति को वैज्ञानिक नहीं मानते क्योंकि वैज्ञानिक वानिकी के नाम पर विविध प्रजाति वाले प्राकृतिक वनों को काट डाला गया। इनकी जगह सीधी पंक्ति में एक ही किस्म के पेड़ लगा दिए गए। इसे बागान कहा जाता है।

वन अधिनियम में 1878 और 1927 में दो बार संशोधन किए गए। 1878 वाले अधिनियम में जंगलों को तीन श्रेणियों में बाँटा गया: आरक्षित, सुरक्षित व ग्रामीण।

Study Learning Notes

लोगों का जीवन कैसे प्रभावित हुआ?

➡ ग्रामीण अपनी अलग-अलग ज़रूरतों जैसे ईंधन, चारे व पत्तों की पूर्ति के लिए वन में विभिन्न प्रजातियों का मेल चाहते थे। लेकिन **वन विभाग ने जहाज़ों और रेलवे के लिए सख्त, लम्बी और सीधी लकड़ी के लिए सागौन और साल जैसी प्रजातियों को प्रोत्साहित किया** और दूसरी किस्में काट डाली।

- वन अधिनियम कानून के कारण घर के लिए लकड़ी काटना, पशुओं को चराना, कंद-मूल-फल इकट्ठा करना आदि गैरकानूनी बन गया।
- जंगलों से लकड़ी चुराते समय पकड़े जाने पर वन-रक्षकों का घूस माँगना।
- जलावनी लकड़ी एकत्र करने वाली औरतें परेशान रहने लगीं।
- मुफ़्त खाने-पीने की मांग करके लोगों को तंग करना पुलिस और जंगल की चौकीदारों के लिए सामान्य बात थी।

वनों के नियमन से खेती कैसे प्रभावित हुई?

यूरोपीय उपनिवेशवाद का सबसे गहरा प्रभाव झूम या घुमंतू खेती की प्रथा पर पड़ा। एशिया,अफ़्रीका व दक्षिण अमेरिका के अनेक भागों में यह खेती एक परंपरागत तरीका है।

इसके कई स्थानीय नाम है जैसे- दक्षिण-पूर्व एशिया में लादिंग, मध्य अमेरिका में मिलपा, अफ़्रीका में चितमेन या तावी व श्रीलंका में चेना।

हिंदुस्तान में घुमंतू खेती के लिए धया, पेंदा, बेवर, नेवड़, झूम, पोड्डू, खंदाद और कुमरी कुछ स्थानीय नाम हैं।

➡ **घुमंतू कृषि** के लिए जंगल के कुछ भागों को बारी-बारी से काट कर जलाया जाता है। मॉनसून की पहली बारिश के बाद इस राख में बीज बो कर अक्टूबर-नवंबर में फ़सल काटी जाती है।

➡ इन खेतों पर एक-दो साल खेती करने के बाद इन्हें 12 से 18 साल तक के लिए परती छोड़ दिया जाता है जिससे वहाँ फिर से जंगल पनप जाए।

➡ **इन भूखंडों में मिश्रित फ़सलें जैसे:- मध्य भारत और अफ़्रीका में ज्वार-बाजरा, ब्राज़ील में कसावा और लैटिन अमेरिका के अन्य भागों में मक्का व फलियाँ उगाई जाती हैं।**

यूरोपीय वन रक्षकों की नज़र में यह तरीका जंगलों के लिए नुकसानदेह था।

- ऐसी ज़मीन पर रेलवे के लिए इमारती लकड़ी वाले पेड़ नहीं उगाए जा सकते थे।
- जंगल जलाते समय बाकी बेशकीमती पेड़ भी लपटों में आ जाते थे।
- सरकार के लिए लगान का हिसाब रखना मुश्किल था।

इस कारण सरकार ने घुमंतू खेती को रोकने के लिए अनेक समुदायों को जंगलों में उनके घरों से जबरन विस्थापित कर दिया गया। कुछ को अपना पेशा बदलना पड़ा तो कुछ ने छोटे-बड़े विद्रोहों के ज़रिए प्रतिरोध किया।

Study Learning Notes

शिकार की आज़ादी किसे थी?

जंगलों में या उनके आसपास रहने वाले लोगों द्वारा हिरन, तीतर जैसे छोटे-मोटे शिकार करके जीवनयापन करने की पारंपरिक प्रथा अब गैर-कानूनी हो गई। परंतु दूसरी तरफ बड़े जानवरों का आखेट एक खेल बन गया।

➡ हिंदुस्तान में बाघों और दूसरे जानवरों का शिकार करना सदियों से दरबारी और नवाबी संस्कृति का हिस्सा रहा था। किंतु औपनिवेशिक शासन के दौरान शिकार का चलन बढ़ने से कई प्रजातियाँ लगभग पूरी तरह लुप्त हो गई।

➡ अंग्रेज़ों का मानना था कि बड़े जानवर जंगली, बर्बर और आदि समाज के प्रतीक-चिन्ह थे। **इन जानवरों को मार कर वे हिंदुस्तान को सभ्य बनाएँगे।** किसानों के लिए खतरा बोलकर बाघ, भेड़िये और बड़े जानवरों के शिकार पर इनाम दिए गए।

1875 से 1925 के बीच इनाम के लालच में 80,000 से ज़्यादा बाघ, 1,50,000 तेंदुए और 2,00,000 भेड़िये मारे गए।

धीरे-धीरे बाघ का शिकार एक खेल की ट्रॉफ़ी में बदल गया। **अकेले जॉर्ज यूल (अंग्रेज़ अफ़सर) ने 400 बाघों को मारा था।**

काफ़ी समय बाद पर्यावरणविदों और संरक्षणवादियों द्वारा इन सारी प्रजातियों की सुरक्षा के लिए आवाज़ उठाई गई।

Study Learning Notes

नए व्यापार, नए रोज़गार और नई सेवाएँ

जंगलों पर वन विभाग का नियंत्रण हो जाने के बाद कई समुदाय अपने परंपरागत पेशे छोड़ कर वन उत्पादों का व्यापार करने लगे।

इसी तरह 19वीं सदी के मध्य में ऊँची जगह पर रहकर मैनियोक उगाने वाले ब्राज़ीली ऐमेज़ॉन के मुनदुरुकु समुदाय के लोगों ने व्यापारियों को रबड़ (जंगली रबड़ के वृक्षों से लेटेक्स एकत्र करके) बेचा। बाद में वे व्यापार चौकियों की ओर नीचे उतर आए और पूरी तरह व्यापारियों पर निर्भर हो गए।

➡ मध्यकाल से ही आदिवासी समुदायों द्वारा बंजारा आदि घुमंतू समुदायों के माध्यम से हाथियों और दूसरे सामान जैसे:- खाल, सींग, रेशम के कोये, हाथी-दाँत, बाँस, मसाले, रेशे, घास, गोंद और राल के व्यापार के सबूत मिलते हैं।

➡ लेकिन अंग्रेज़ों के आने के बाद ब्रिटिश सरकार ने कई बड़ी यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों को विशेष इलाकों में वन-उत्पादों के व्यापार की इजारेदारी सौंप दी।

➡ स्थानीय लोगों द्वारा शिकार करने और पशुओं को चराने पर पाबंदी लगा दी गईं। इस प्रक्रिया में मद्रास प्रेसीडेंसी के कोरावा, कराचा व येरूकुला जैसे अनेक चरवाहे और घुमंतू समुदाय की जीविका छिन गई।

कुछ को अपराधी कबीले कहा जाने लगा जो सरकार निगरानी में फ़ैक्ट्रियों, खदानों व बागानों में काम करने को मजबूर हो गए।

➡ असम की चाय बागानों में काम करने के लिए झारखंड के संथाल और उराँव व छत्तीसगढ़ के गोंड जैसे आदिवासी को भर्ती किया गया। उनकी मज़दूरी बहुत कम और कार्यपरिस्थितियाँ बहुत खराब थी। उनका घर वापस जाना भी आसान नहीं था।

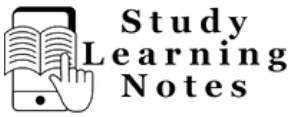

वन विद्रोह

हिंदुस्तान और दुनिया भर में वन्य समुदायों ने अपने ऊपर थोपे गए बदलावों के खिलाफ़ बगावत की। जैसे: संथाल परगना में सीधू और कानू, छोटा नागपुर में बिरसा मुंडा और आंध्र प्रदेश में अल्लूरी सीताराम राजू।

बस्तर के लोग

- बस्तर छत्तीसगढ़ के सबसे दक्षिणी छोर पर आंध्र प्रदेश, उड़ीसा व महाराष्ट्र की सीमाओं से लगा हुआ क्षेत्र है।
- इसका केंद्रीय भाग पठारी, पठार के उत्तर में छत्तीसगढ़ का मैदान और दक्षिण में गोदावरी का मैदान है।
- इंद्रावती नदी बस्तर के पूर्व से पश्चिम की तरफ़ बहती है।
- यहाँ मरिया और मुरिया गोंड, धुरवा, भतरा, हलबा आदि अनेक आदिवासी समुदाय रहते हैं।
- अलग-अलग ज़बानें बोलने के बावजूद इनके रीति-रिवाज और विश्वास एक जैसे हैं।
- धरती के साथ नदी, जंगल व पहाड़ों की आत्मा को भी मानते हैं।
- हर गाँव के लोग अपनी सीमाओं के भीतर समस्त प्राकृतिक संपदाओं की देखभाल करते हैं।

https://studylearningnotes.com

- एक गाँव के लोग को दूसरे गाँव के जंगल से लकड़ी लेने के लिए एक छोटा शुल्क (देवसारी, दांड़ या मान) अदा करते हैं।

➡ कुछ गाँव अपने जंगलों की हिफ़ाज़त के लिए चौकीदार रखते हैं जिन्हें वेतन के रूप में हर घर से थोड़ा-थोड़ा अनाज दिया जाता है। हर वर्ष एक बड़ी सभा के आयोजन में एक परगने के गाँवों के मुखिया जुटते हैं और जंगल सहित तमाम दूसरे अहम मुद्दों पर चर्चा करते हैं।

Study Learning Notes

लोगों के भय

1905 में औपनिवेशिक सरकार द्वारा जंगल के दो-तिहाई हिस्से को आरक्षित करने, घुमंतू खेती को रोकने और शिकार व वन्य-उत्पादों के संग्रह पर पाबंदी लगाने से बस्तर के लोग बहुत परेशान हो गए थे।

- वन-विभाग के लिए पेड़ों की कटाई और ढुलाई का काम मुफ्त करने और जंगल को आग से बचाने के शर्त पर कुछ गाँवों (वन ग्राम) को आरक्षित वनों में रहने दिया गया।
- बाकी गाँवों के लोगों को बगैर सूचना या मुआवज़े के हटा दिया गया। 1899-1900 में और फिर 1907-1908 में भयानक अकाल का दौर आया था।

➡ बाज़ारों में, त्योहारों के मौके पर और जहाँ कहीं भी कई गाँवों के मुखिया और पुजारी इकट्ठा होते, सभी इस मुद्दे पर चर्चा करते थे।

- काँगेर वनों के धुरवा समुदाय (जहाँ आरक्षण सबसे पहले लागू हुआ था) के लोग इस मुहिम में सबसे आगे थे।
- 1910 में आम की टहनियाँ, मिट्टी के ढेले, मिर्च और तीर (अंग्रेजों के खिलाफ बगावत का संदेश) गाँव-गाँव चक्कर काटने लगे।
- हरेक गाँव ने बगावत के खर्चे में कुछ न कुछ मदद की। बाज़ार लूटे गए, अफ़सरों और व्यापारियों के घर, स्कूल और पुलिस थानों को लूटा व जलाया गया तथा अनाज का पुनर्वितरण किया गया।

➡ अंग्रेज़ों ने बगावत को कुचलने के लिए सैनिक भेजे। सैनिकों ने उनके तंबुओं को घेर कर गोलियाँ चला दीं।उनपर कोड़े बरसाते और सज़ा देते सैनिक गाँव-गाँव घूमने लगे।

- ज़्यादातर गाँव के लोग भाग कर जंगलों में चले गए। अंग्रेज़ों ने तीन महीने (फ़रवरी-मई) में बगावत पर नियंत्रण पा लिया। फिर भी वह गुंडा धूर को कभी नहीं पकड़ सके।
- **इससे आरक्षण का काम कुछ समय के लिए रुक गया और आरक्षित क्षेत्र को भी 1910 से पहले की योजना से लगभग आधा कर दिया गया।**

जावा के जंगलों में हुए बदलाव

जावा को आजकल इंडोनेशिया की चावल-उत्पादन द्वीप के रूप में जाना जाता है लेकिन इस समय में यह क्षेत्र अधिकांशत: वनाच्छादित था।

- इंडोनेशिया एक डच उपनिवेश था। जिसने जावा में वन-प्रबंधन की शुरुआत की थी। और जहाज़ बनाने के लिए यहाँ से लकड़ी हासिल करना चाहते थे।
- हालाँकि उपजाऊ मैदानों में ढेर सारे गाँव थे लेकिन पहाड़ों में भी घुमंतू खेती करने वाले अनेक समुदाय रहते थे।

Study Learning Notes

जावा के लकड़हारे

- **जावा में कलांग समुदाय के लोग कुशल लकड़हारे और घुमंतू किसान थे।**
- 1755 में जावा के माताराम रियायत बँटने पर यहाँ के 6,000 कलांग परिवारों को भी दोनों राज्यों में बराबर बाँट दिया गया।
- उनके कौशल के बगैर सागौन की कटाई कर राजाओं के महल बनाना बहुत मुश्किल था।
- 18वीं सदी में डचों ने वनों पर नियंत्रण किया और कोशिश की कि कलांग उनके लिए काम करें।
- **1770 में कलांगों ने एक डच किले पर हमला करके इसका प्रतिरोध किया लेकिन इस विद्रोह को दबा दिया गया।**

डच वैज्ञानिक वानिकी

- **19वीं सदी में डच उपनिवेशकों ने जावा में वन-कानून लागू कर ग्रामीणों की जंगल तक पहुँच पर बंदिशें लगा दी।**
- इसके बाद नाव या घर बनाने के लिए, सिर्फ़ चुने हुए जंगलों से कड़ी निगरानी में लकड़ी काटी जा सकती थी।
- ग्रामीणों को मवेशी चराने, बिना परमिट लकड़ी ढोने या जंगल से गुज़रने वाली सड़क पर घोड़ा-गाड़ी अथवा जानवरों पर चढ़ कर आने-जाने के लिए दंडित किया जाने लगा।
- **भारत की ही तरह यहाँ भी जहाज़ और रेल-लाइनों के निर्माण होने से वन-प्रबंधन और वन-सेवाओं को लागू किया गया।**
- 1882 में अकेले जावा से ही 2,80,000 स्लीपरों का निर्यात किया गया था।

➡ डचों ने पहले जंगलों में खेती की ज़मीनों पर लगान लगा दिया था। मगर बाद में कुछ गाँवों को इस शर्त पर लगान मुफ्त कर दिया कि वे सामूहिक रूप से पेड़ काटने और लकड़ी ढोने के लिए भैंसें उपलब्ध कराने का काम मुफ्त में करेंगे।

- **इस व्यवस्था को ब्लैन्डाँगडिएनस्टेन के नाम से जाना गया।**
- बाद में वन-ग्रामवासियों को लगान-माफ़ी के बजाय थोड़ा-बहुत मेहनताना दिया जाने लगा लेकिन वन भूमि पर खेती करने के उनके अधिकार सीमित कर दिए गए।

Study Learning Notes

सामिन की चुनौती

1890 के आसपास सागौन के जंगलों में स्थित रान्दुब्लातुंग गाँव के निवासी सुरोन्तिको सामिन ने जंगलों पर राजकीय मालिकाने पर सवाल किया कि हवा, पानी, ज़मीन और लकड़ी राज्य की बनाई हुई नहीं है इसलिए उन पर उसका अधिकार नहीं हो सकता।

- जल्द ही एक व्यापक आंदोलन खड़ा हो गया। इसको संगठित करने में सामिन का दामाद भी सक्रिय था।

https://studylearningnotes.com

- 1907 तक 3,000 परिवार उसके विचारों को मानने लगे थे।
- **ज़मीन का सर्वेक्षण करने आए डचों का सामिनवादियों ने अपनी ज़मीन पर लेट कर इसका विरोध किया जबकि दूसरों ने लगान या जुर्माना भरने या बेगार करने से इनकार कर दिया।**

युद्ध और वन-विनाश

पहले और दूसरे विश्व युद्ध का जंगलों पर गहरा असर पड़ा। जावा पर जापानियों के कब्ज़े से ठीक पहले डचों ने "भस्म-कर-भागो-नीति" अपनाई जिसके तहत आरा-मशीनों और सागौन के विशाल लट्ठों के ढेर जला दिए गए जिससे वे जापानियों के हाथ न लग पाएँ।

- इसके बाद जापानियों ने वनवासियों को जंगल काटने के लिए बाध्य करके अपने युद्ध उद्योग के लिए जंगलों का निर्मम दोहन किया।
- बहुत सारे गाँव वालों ने इस अवसर का लाभ उठाकर जंगल में अपनी खेती का विस्तार किया जिसे हासिल करना इंडोनेशियाई वन सेवा के लिए कठिन था।

Study Learning Notes

वानिकी में नए बदलाव

80 के दशक से एशिया और अफ़्रीका की सरकारों को समझ में आया कि वैज्ञानिक वानिकी और वन समुदायों को जंगलों से बाहर रखने की नीतियों के कारण बार-बार टकराव पैदा होते हैं।

- परिणामस्वरुप, वनों से इमारती लकड़ी हासिल करने के बजाय जंगलों का संरक्षण ज़्यादा महत्वपूर्ण हो गया।
- **मिज़ोरम से लेकर केरल तक हिंदुस्तान में हर कहीं घने जंगल (सरना, देवराकुडु, कान, राई—पवित्र बगीचा) सिर्फ ग्रामीणों की रक्षा से बच पाए।**
- कुछ गाँव के हर परिवार ने बारी-बारी से जंगलों की चौकसी करी।

studylearningnotes.com